AJIS

Aligarh Journal of Interfaith Studies

International Peer Reviewed, , Open Access Journal
ISSN: (in process) | Impact Factor | ESTD Year 2020

योग मनोवैज्ञानिक चिन्तन और विश्वसंहति का साधन मार्ग

डॉ० मारूफ उर रहमान

सहायक आचार्य

संस्कृत विभाग जाकिर हुसैन दिल्ली कॉलिज (सांध्य) दिल्ली , विश्वविद्यालय , दिल्ली

Email: maroof.sherwan@ gmail.com

ARTICLE DETAILS

Article History
Published Online:
Published

Keywords: परम पुरुषार्थ, वेदों , उपनिषदों, योगदर्शन , गीता

ABSTRACT

–प्राचीन काल से भारतवर्ष के योगियों ने मनुष्य के शरीर , प्राण , मन और बुद्धि इन सभी को उपयुक्त साधनाओं के द्वारा उसे परम पुरुषार्थ अर्थात् मोक्ष प्राप्ति के मार्ग के लिए प्रशस्त किया है । भारतीय प्राचीन विरासत एवं जीवन पद्यति योग एक सही जीवन जीने का विज्ञान है । योग स्वयं के बारे में समझ , जीवन का प्रयोजन और ईश्वर से संबंध की जानकारी विकसित करने में सहायता करता है । योग अपने विशृंखलित रूप से वेदों , उपनिषदों तथा सूत्रों में उपलब्ध होता है । प्रस्तुत पत्र में योग के मुख्य ग्रन्थों यथा पतंजलि योगदर्शन , गीता आदि ग्रन्थों के आधार पर ही विश्लेषण किया गया है

प्रस्तावना (Introduction):

सृष्टि के आदि में पृथ्वी पर जन्म लेने के साथ ही मनुष्य ने जीवन में दुःख का अनुभव करके उससे बचने का प्रयास प्रारम्भ किया था जिसके संकेत हमें " तमेव विदित्वा अतिमृत्युमेति " मंत्र

International
Peer-Reviewed Journal
April 2020, Volume 1, Issue 4

से प्राप्त होते हैं । उसी काल में उसने विविध (आध्यात्मिक , आदिभौतिक और आदिदैविक) दुःखों का निवारण करने क लिए जिन अनेक उपायों का अनुसंधान किया योगसाधना उनमें से मुख्य है ।

योग उस आध्यात्मिक प्रक्रिया को कहते है जिसमें शरीर , मन और आत्मा को एक साथ लाने का काम होता है । साधारण भाषा में दो वस्तुओं के मिलने को योग कहते है और पृथकता को वियोग । योग पद धातु पाठ के अनुसार " युजिर योगे[1] " (जुड़ना) तथा युज समाधौ [2] दो प्रकार से निष्पन्न माना गया है । पतंजलि योगदर्शन का योग पद " युज समाधौ धातु से निष्पन्न हुआ है , जिसका अर्थ है समाधि । गीता में श्रीकृष्ण ने अपने उपदेश में योग के सम्बन्ध में कहा - " समत्वं योग उच्यते "[3] अर्थात समता का नाम ही योग है । गीता में योग की दूसरी परिभाषा " योगः कर्मसु कौशलम्"[4] अर्थात् कर्म की कुशलता ही योग है । पतजलि योगसूत्र में " योगश्चितवृतिनिरोधः"[5] चित्त की वृत्तियों को निरोधित करना ही योग कहा गया है । चित्तवृत्ति के निरोधित रूप से योग दो प्रकार का होता है - सम्प्रज्ञात एवं असम्प्रज्ञात ।

भारतीय चिंतन में मनोविज्ञान का आध्यधिक सूक्ष्म और व्यावहारिक रूप योग में दिखाई देता है । योग मनोविज्ञान को न केवल आस्तिक बल्कि नास्तिक दर्शनों ने भी स्वीकार किया है । योग मनोविज्ञान में सबसे अधिक महत्वपूर्ण तत्व चित्त है । योग में अहंकार एवं इन्द्रियों के साथ बुद्धि को चित्त कहा गया है । चित्त से तात्पर्य अन्तःकरण से है जो बुद्धि का उपलक्षक है चित्त के स्वरूप का ज्ञान वृत्तियों के निरोध रूपी फल प्राप्ति हेतु आवश्यक है । योगसूत्र के अनुसार चित्त एक स्फुटित सा निर्मल और शान्त तालाब है वह तब तक निर्मल और शान्त ही बना रहता है जब तक ही उसमे विचार या वृत्तियों की लहरे नहीं उठती हैं यह लहरें ही उसे अशान्त बना देती हैं मानव व्यवहार का सीधा सम्बन्ध उसके मस्तिष्क से है क्योंकि उसकी प्रत्येक क्रिया उसके मन से ही सम्पन्न होती है ।

भारतीय धर्म और दर्शन में योग का अत्यधिक महत्त्व है । अन्तःकरणचतुष्ट्य चेतना की क्रिया पद्धति मन , बुद्धि , चित्त आर अहंकार के रूप में विभाजित है । चित्त की अनेकानेक वृत्तियाँ होती है । चित्त जिस अवस्था अथवा स्थिति में रहता है वह उसकी वृत्ति बन जाती है । वृत्ति का अथ रंग या रीति से है । चित्त अनेक रूपों में परिणत होता रहता है इसलिए यह अनेक वृत्तियों वाला कहा जाता है । चित्त सत्व , रज और तम तीन गुणों से बना हुआ है । मनुष्य में इन तीनों गुणों में से किसी एक गुण की प्रधानता रहती है । सत्त्व की प्रधानता होने पर वह लौकिक ऐश्वर्य

International
Peer-Reviewed Journal
April 2020, Volume 1, Issue 4

और शब्द आदि विषयों से प्रतीत करने वाला होता है परन्तु जब इसमें तम की प्रधानता होती है तो वह अधर्म , अज्ञान , अवैराग्य और अनैश्वर्य को प्राप्त करने वाला होता है । उसमें से तम के आवरण को हटान से रज की प्रधानता होती है , तो वह धर्म ज्ञान , वैराग्य आर ऐश्वर्य से प्रेम करने वाला होता है । वह रज के मल से पृथक होकर अपने रूप में प्रतिष्ठित हो जाता है । बुद्धि तथा पुरुष का विवेचन करने से वह धर्ममेघ समाधि को प्राप्त कर लेता है अर्थात् मनुष्य के राजस और तामस वृत्तियों का निरोध कर लेने पर उसमें सत्विक वृत्ति का उदय होता है ।

भारतीय दर्शन सात शाखाओं में विभाजित सांख्य और योग प्रमुख दर्शन है । विवेकज्ञान अर्थात् आत्मा शरीर , इन्द्रिय , मन और बुद्धि से भिन्न ह । ज्ञान के बिना दुःखों से मुक्ति प्राप्त करना सम्भव नहीं है , लेकिन मनुष्य इस ज्ञान का अधिकारी तभी बन पाता है जब वह शारीरिक एवं मानसिक वृत्तियों का नियमन करते हुए आत्मा और पुरुष के यथार्थ के स्वरूप को पहचाने । आत्मा के स्वरूप का ज्ञान होने पर ही उसे विवेक ज्ञान हो जाता है । आत्मज्ञान की साधना क लिए योग दर्शन में व्यावहारिक मार्ग बतलाया गया है ।

विश्व में योग का महत्व-

आज सम्पूर्ण विश्व में योग का अनुसरण करके संतुलित तथा प्रकृति से सुसंगत जीवन जीने का प्रयास करने वाले व्यक्तियों की संख्या दिन - प्रतिदिन बढ़ रही है , जिसमें दुनिया की विभिन्न संस्कृतियों और मतों के मानने वाले शामिल हैं । यह इससे सिद्ध होता है कि संयुक्त राष्ट्र संघ के 193 सदस्यों में से लगभग 177 सदस्यों ने 21 जून , 2015 का अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस के रूप में मान्यता देने के प्रस्ताव पर सहमति दी , जिसमें 47 मुस्लिम देशों ने भी इस प्रस्ताव पर मुहर लगाई ।[6]

भारत के प्रस्ताव से स्वीकृत योग ने आज विश्व के हर कोने में लोगों को एक धरातल पर लाकर खड़ा किया है । मानवीय एकता का आधार , प्रथम विश्व योग दिवस पर सम्पूर्ण विश्व में लगभग 30 करोड़ से ज्यादा लोगों ने योग किया । इससे विश्व कल्याण में मानव समुदाय के हित में अपनी प्राचीन विरासत योग क्रिया के प्रयोग की विनम्र आत्मसंतुष्टि का भारतीयों को अहसास होना चाहिए ।

योग और इस्लाम का सम्बंध -

International
Peer-Reviewed Journal
April 2020, Volume 1, Issue 4

योग के आठ अंग तथा इन अंगों के अपने - अपने उप - अंग भी हैं । महर्षि पतंजलि ने जिस अष्टांग योग साधना के बारे में वर्णन किया है वह सब इश्वरदत मोहम्मद साहब की जिन्दगी में परिलक्षित होते हैं ।

यम सामाजिक नैतिकता से जुड़ा हुआ एक अंग है । मोहम्मद साहब ने अपनी जिन्दगी में कभी भी अपशब्द अथवा व्यवहार से किसी को हानि नहीं पहुँचायी , नियम के अन्तर्गत मनुष्य को कर्तव्य परायण बनाने से लेकर उसकी व्यक्तिगत नैतिकता का विचार किया गया है । जबकि इस्लाम में आन्तरिक शुद्धता और वाहा शुद्धता , संतोष , तप , आत्मचिंतन एवं ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण पर बल दिया गया है । आसन का उद्देश्य शारीरिक नियंत्रण करना है , नमाज में भी बुराईयों , पापों , अश्लीलताओं आदि निषिद्ध कामों से रोककर शारीरिक नियंत्रण करना है । प्राणायाम , नाणी साधन और उसके जागरण के लिए किया जाने वाला श्वास और प्रश्वास का नियमन प्राणायाम है । कुरान की तिलावत श्वाँसों के अभ्यास से बेहतर होती है । प्रत्याहार इन्द्रियों के विषयों से हटाने का नाम ही प्रत्याहार है । इस्लाम में भी अपने नफ्ज को बस में करने अर्थात् नफ्स के खिलाफ चलने को कहा गया है । धारणा एवं ध्यान चित्त को एक स्थान विशेष पर केन्द्रित करना अथवा एकाग्र होना ही धारणा है और ध्येय वस्तु का चिंतन करते हुए चित्त तद्रुपे हो जाता है तो उसे ध्यान कहते हैं । इस्लाम में भी पुरसुकून माहोल में इबादते इलाही अर्थात् ईश्वर में ध्यानस्त रहने जैसे नमाज या अन्य ईश्वरीय इबादत करना है । समाधि - योग दर्शन के द्वारा मोक्ष प्राप्ति संभव माना गया है । आत्मा का परमात्मा से मिलन इसी अवस्था में होता है । हजरत मुहम्मद साहब की जिन्दगी में शबे मेराज़ की घटना का काफी महत्व है ।

योग को किसी धर्म सम्प्रदाय विशेष से जोड़कर उसमें दोष करने के बजाय शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य से जोड़कर देखना एक उदार दृष्टि का परिचायक होगा । मुसलमानों के 5 बुनियादी अर्कानों में से एक नमाज है , इसके सारे अरकान योग से ही आरम्भ होते हैं । इस ध्यान विधि (नमाज) से जिसके द्वारा व्यक्ति ईश्वर (माबूद) के करीब आने की कोशिश करता है । योग और इस्लाम के बीच कई समानताओं में सबसे स्पष्ट समानता नमाज के आसनों और यौगिक क्रियाओं में प्रयुक्त शारीरिक व्यायामों में है । नमाज स पहल नियत की दुआ को जातो ह इन्नी वज्जहतो वज्जोहा " लिल्लजी फतरस्समवाते वल अरज हनीफऊ ' अर्थात् संसार के सभी विषयों से ध्यान हटाकर मैं सारा ध्यान उस मालिक की ओर करता हूँ जा जमीन और आसमान का मालिक है वहीं योग दर्शन के प्रथम सूत्र " योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः " अर्थात् चित्त की वृत्ति का

International
Peer-Reviewed Journal
April 2020, Volume 1, Issue 4

निरोधित करना योग कहलाता है , दोनों का अर्थ समान ही है । योग हमारे मन , बुद्धि और शरीर को काबू में रखकर पुण्यमय कार्यों को करने के लिए प्रेरित करता है और नमाज से भी यह सब पाप्त होता है । नमाज के अरकान एक तरह से योगासन हैं क्योंकि नमाज और योगासन की क्रियाओं में काफी समानताएँ पायी जाती हैं । जैसे कियाम और ताड़ासन , सजदा और सशांग , बजासन और जुलूस में समानताएँ पायी जाती हैं । योग से पूर्व संकल्प लिया जाता है वहीं नमाज से पूर्व भी नीयत की जाती है । नमाज से पूर्व वुजू किया जाता है । उसी प्रकार योग में शौच का नियम है । यम को हुकूकुन्नास , नियम का हुकूकुल्लाह कहते है । कुरान में सूराए बकरा[7] ' में अल्लाह (ईश्वर) ने फरमाया बेशक ईश्वर ने तुम पर उसको नियुक्त किया है जिसको इल्म व जिस्म में पूर्ण (मुकम्मल) पाया है । अशरफ ए निजामी के अनुसार योग एक धर्म नहीं अपितु विधियों और कौशलों का सामच्चय है ।

वृत्तियाँ - क्लिष्ट और अकलिष्ट दो प्रकार की होती है ।
क्लिष्ट - क्लेश का हेतु वाली वृत्तियाँ क्लिष्ट कहलाती है ।
अकलिष्ट - जो वृत्तियाँ सुख का हेतु होती है वे अक्लिष्ट कहलाती हैं ।

इन वृत्तियों से संस्कार बनते हैं और संस्कारों से वृत्तिया बनती हैं । यह वृत्ति और संस्कार का चक्र सदा चलता रहता है । चित्तवृत्तियों का निरोध हो जाने पर चित्त का अधिकार समाप्त हो जाता है और वह आत्मा के समान शुद्ध रूप में रहता है । तात्पर्य यह है कि क्लेश के कारण ही प्राणी त्रिविध तापों को भोगता है । दुःखदायक होने के कारण अविद्यादि क्लेश कहे जाते हैं ।[8] ये क्लेश संस्कार रूप से चित्त में विद्यमान रहते हैं । संस्कार से दृष्ट अथवा अदृष्ट की सहायता से वृत्ति रूप से परिणत होने वाले ये क्लेश चित्त को विभिन्न प्रकार के कार्यो में संलग्न करके क्लेशमूलक कर्माशय को बनाते हैं । जिसके द्वारा गुणों का अधिकार और अधिक सुदढ़ हो जाता है ।

क्लेश - अविद्या , अस्मिता , राग , द्वेष एवं अभिनिवेश पाँच क्लेश कह हैं । यथार्थ ज्ञान से भिन्न ज्ञान अविद्या हैं[9] । अविद्या सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है क्योंकि वह अन्य चारों क्लेशों की भी उत्पत्ति स्थल रूप कहीं गई है । अस्मिता , अविद्या का सर्वप्रथम कार्य रूप है । अस्मिता काल में बुद्धि एवं पुरुष में बुद्धि के गुणों का आरोप होने के कारण वह स्वयं को कर्ता एवं भोक्ता आदि समझने लगता है । राग तृष्ण लोभ है । जिस प्रकार सुख एवं उसके साधनों के प्रति राग हा जाता है , ठीक उसी प्रकार दुःख एवं उसके साधनों क प्रति स्वाभाविक घृणा होती है वहीं द्वेष नामक

International
Peer-Reviewed Journal
April 2020, Volume 1, Issue 4

क्लेष कहा जाता है । जीवन के प्रति उत्कष्ट अभिलाषा क्लिशन्ति इति क्लेशः इस व्युत्पत्ति के आधार पर जिनके द्वारा प्राणी दुःख को प्राप्त करते हैं वे क्लेश कहे जाते है । तात्पर्य यह है कि प्रत्येक प्राणी मरना नहीं चाहता है बल्कि अपनी दीर्घायु की इच्छा करता है । द्रष्टा एवं दृश्य का संयोग ही दुःख का कारण है[10] और इस संयोग का कारण ही अविद्या है ।[11] " क्योंकि अविद्या अनादिकालीन है , अतएव यह संयोग भी अनादि काल से ही चला आ रहा है । इस संयोग के परिणाम स्वरूप पुरुष भ्रान्त होकर अपने स्वरूप ही प्रकृति भुला बैठता है अत : समस्त दुखों से अत्यन्तिक निवृत्त हेतु इस अविद्या निमितिक संयोग को हटाना परमावश्यक है । देखना है इस अविद्या का नाश हो जाने पर जो बुद्धि सत्व एवं पुरुष के संयोग का अभाव है , वही मोक्ष कहा जाता है । योगदर्शन में दो प्रकार का मोक्ष माना गया है - जीवनमुक्ति तथा विदेहमुक्ति ।

संसार में व्यक्ति के दुःख का सबसे बड़ा कारण मिथ्या ज्ञान है । अविद्या का नाश एवं कैवल्य की प्राप्ति का एक मात्र उपाय विवेकख्याति है । जब साधक का चित्त रजो एवं तमोगुण रूप मल से रहित हो जाता है अर्थात् मात्र सत्वगुण का उद्रेक ही उसके चित्त में निरन्तर होता रहता है तब उसे चित्त का वैशारद्य कहा जाता है । चित्त की एकाग्रता स्थिति का प्रवाह भी इसी समय होता है । इस प्रकार जब चित्त पूर्ण निर्मल हो जाता है तो उसमें विवेक - ख्याति रूपो विशिष्ट ज्ञान का उदय होता है ।

विज्ञानभिक्षु के अनुसार निर्विचारवैशारा के हो जाने पर स्वयं ही विवेक ख्याति का उदय अथवा परमतत्त्व का साक्षात्कार हो जाता है । इस निर्मल चित्त में अविद्या का लेशमात्र भी अवशेष नहीं रहता इससे उदित होने वाली प्रज्ञा को ऋतम्भरा प्रज्ञा कहा जाता है । इस प्रकार निरन्तर विवेकख्याति का प्रवाह साधक के चित्त में होता रहता है । यह अवस्था ही धर्ममेघ समाधि कहलाती है ।

योगाङ्ग -

" योगाङ्गानुष्ठानादशुद्धिक्षये ज्ञानदीप्तिराविवेकख्याते । "[11]

योगा के अनुष्ठान से अशुद्धि का क्षय हो जाता है ज्ञान की दीप्ति होती है और विवेकख्याति की प्राप्ति होती है । अविद्यादि पाँच प्रकार के मिथ्याज्ञान विनष्ट हा जाते हैं । दुःख समाप्त होकर सुख और आनन्द की वर्षा होती है । अष्टांग योग का निरन्तर अभ्यास करने से साधक के चित्त में विद्यमान पंच परवाह अविद्या रूपी मल धीरे - धीरे समाप्त हो जाता है और साथ ही साथ उस छयक्रम की अनुरोधिनी विवेक ख्याति होती जाती है । अधिक अभ्यास से साधक का

International
Peer-Reviewed Journal
April 2020, Volume 1, Issue 4

चित मल रूप रहित होकर विवक ख्याति से अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लेता है । इलियार्ड के अनुसार - योग के आठ अंगों का पालन करना साधक के लिए अनिवार्य है । इन अंगों की नैतिकता के आधार पर तीन वर्गों में विभाजित किया गया है । प्रथम दो यम , नियम के द्वारा नैतिक दृष्टि से व्यक्ति के व्यवहार को अनुशासित किया जाता है । आसन , प्राणायाम एवं प्रत्याहार ये तीनों ही शारीरिक अनुशासन से सम्बन्धित हैं तथा शेष तीन अंग धारणा , ध्यान और समाधि इनका सम्बन्ध मानसिक अनुशासन से है ।

यम - " अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिगृहा यमः " यम् उपरमे धातु से घञ प्रत्यय लगकर बना है । इसके अन्तर्गत , निर्दिष्ट उपाय विधि न होकर निषेध परक ही है । पतंजलि ने सत्य , अहिंसा , अस्तेय , ब्रह्मचर्य , एवं अपरिग्रह पाँच यम माने ह । सांसारिक व्यवहार में मानव के लिए अपेक्षित सभी नैतिक मूल्यों का समावेश इनमें किया है ।

नियम - " शौचसंतोषः स्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमा " शौच , सन्तोष , तप , स्वाध्याय और ईश्वरप्रणिधान इन पाँच नियमों को साधक की आत्मशुद्धि एवं उन्नति में सहायक माना गया है ।

आसन - " स्थिरसुखमासनम् जिस रीति में स्थिर सुख हो , उसे आसन कहते हैं । पतजलि योग साधना के लिए अर्थात जिसमें शरीर और आत्मा सुखपूर्वक स्थिर हो , आसन की सिद्धि , प्रयत्न की स्थिरता तथा अनन्त ब्रह्म में समाहित होने से प्राप्त होती है । शरीर की चेष्टाओं को रोककर ईश्वर में ध्यान लगाने से आसन की सिद्धि होती है । आसन की सिद्धि से सर्दी - गर्मी , भूख - प्यास , मान - अपमान आदि से पीड़ित नहीं होता ।

प्राणायाम - " तस्मिन् सति श्वासप्रश्वासयोः गतिविच्छेदः प्राणायामः ' आसन की सिद्धि के अनन्तर श्वास और प्रश्वास की गति का विच्छेद होना प्राणायाम कहलाता है । श्वास बाहा वायु का आचमन करना तथा कोष्ठ की वायु को बाहर निकालना प्रश्वास कहलाता है । सूत्रकार ने चार प्रकार के प्राणायाम बतलाये हैं - बाहा , आभायन्तर , स्तम्भ , बाहय एवं आभ्यन्तर दोनों प्रकार के विषयों का अतिक्रमण करना ।

प्रत्याहार - " स्वविषयासं प्रयोगे चित्तस्वरूपानुकार इवेन्द्रियाणं प्रत्याहारः अर्थात् अपने - अपने विषयों के साथ सम्पर्क न रहने पर चित्त अपने स्वरूप का अनुसरण करने लगता है वैसे ही इन्द्रियों का अपने - अपने विषयों से प्रयोग बन्द हो जाता है प्रत्याहार कहलाता है । चित्तवृत्ति के रूप के समान ही जब चक्षु आदि इन्द्रियाँ निरुद्ध हो जाती हैं तो वे अन्य उपाय की उपेक्षा नहीं

International
Peer-Reviewed Journal
April 2020, Volume 1, Issue 4

करती है जैसे मधुमक्खियाँ मधुकराज के उठने पर उड़ जाती है और बैठने पर बैठ जाती हैं । विज्ञानभिक्षु प्रत्याहार को इन्द्रियों का ही धर्म मानते हैं । प्रत्याहार के द्वारा योगी की इन्द्रियाँ सर्वप्रकारेण उसके वश में हो जाती है ।

धारणा - " देशबन्धश्चित्तस्य धारणा " चित्त को किसी एक देश में बाँधना , धारणा करना अर्थात् चित्त का किसी नासिका के अग्रभाग आदि स्थानों में ठहरना अथवा एकाग्र किया जाना ही धारणा है । कहलाती है । बांधने से तात्पर्य है उस देश से सम्बन्ध स्थापित करना । देश दो प्रकार के बताये गये हैं प्रथम आध्यात्मिक देश , अन्य प्रकार के देश का नाम - संकीर्तन भाष्यकार ने नहीं किया है अपितु ब्राहय विषयों पर मात्र इतना कहा है । धारणा मे मन की योग्यता उत्पन्न होता है । प्राणायाम का अभ्यास करने से ईश्वर की धारणाओं में मन की योग्यता बढ़ जाती है । अर्थात् ईश्वर में मन और आत्मा की धारणा होने से मोक्ष तक उपासना योग और ज्ञान की योग्यता बढ़ती जाती है ।

ध्यान " तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम् " उस देश विशेष ज्ञान का सदृश प्रवाही होना ध्यान कहलाता है । उसी देश में ध्यान करने आश्रय लेने योग्य ईश्वर है , उसके प्रकाश और आनन्द में ज्ञान की एकत्र सदृश्य प्रवाह चलते रहने , अन्य किसी पदार्थ का स्मरण न होना ध्यान कहलाता है । चित्त का निरन्तर सदृश्य प्रवाह ही ध्यान कहा जाता है ।

समाधि - ध्यान अवस्था में साधक को ध्याता , ध्येय एवं ध्यान तीनों की सत्ता का अनुभव होता रहता है परन्तु समाधिकाल में वह नहीं रहता यही दोनों का वैभिन्य है - " तदेवाथ मात्र निर्भिर्थासं स्वरूपशून्यमिव समाधि " । तब वही ध्यान अर्थमात्र को भाषित करने वाला और स्वरूप से सूना सा हो जाता है तो वह समाधि कहलाता है । धारणा , ध्यान और समाधि का एक देश में इक्टठे हो जाने को संयम कहते हैं । संयम की सिद्धि होने पर बुद्धि में प्रकाश का उदय होता है ।

प्राचीन भारतीय चिंतन का परम लक्ष्य ज्ञान आधारित सुख की प्राप्ति करना रहा ह । संसार के दुःखों से मुक्ति की प्राप्ति और जिज्ञासा के सन्दर्भ में अनेक चिन्तन धाराएँ विकासित हुई जिनका उद्देश्य परमसत्य को जानना तथ दुःखों से आत्यन्तिकनिवृत्ति करना था । परमसत्य के उद्देश्य की पूर्ति के लिए प्राचीन दार्शनिकों ने सिद्धान्त और व्यवहार पक्ष को माध्यम बनाया परन्तु योग दर्शन ने व्यवहार पक्ष को प्रधानता दी ।

अयं तु परमो धर्मो यद् योगेनात्मदर्शनम्

International
Peer-Reviewed Journal
April 2020, Volume 1, Issue 4

अर्थात आत्म दर्शन प्राप्त करना ही परम धर्म है । उपनिषदों में भी योग की महत्ता को स्वीकार किया गया है ।

यदा पंचावतिष्ठन्ते ज्ञानानि मनसा सह ।
बुदिश्च न विचेष्टति तामाहुः परमां गतिम । ।
तां योगमिति मन्यन्ते स्थिरामिद्रयधारणाम । ।[12]

वेद को तीन काण्डों में विभक्त किया गया है - कर्म , ज्ञान और उपासना । कर्म के अन्तर्गत यज्ञादि कर्मों के कौशल को योग माना गया है जिसका लक्ष्य निष्काम होकर कर्म करना और कर्म करते हुए कर्म बन्धन से मुक्त होना ही योग का स्वरूप है । ज्ञानकाण्ड के अनुसार जीवात्मा और परमात्मा के एकीकरण को योग कहा गया है । उपासना काण्ड के अनुसार चित्तवृतियों का निरोध ही योग है ।

योगसूत्र के अनुसार आत्मा में कोई विकार नहीं होता तथापि परिवर्तनशील चित्तवृत्तियों में उसके प्रतिबिम्बित होने के कारण उसमें परिवर्तन का अभ्यास होता है - जैसे नदी की लहरों में प्रतिबिम्बित चन्द्रमा हिलता हुआ जान पड़ता है । विवेकज्ञान न होने पर आत्मा उन्हीं में अपने को देखन लगता है तथा संसारिक विषयों में सुख - दुःख और रागद्वेश का भाव रहने लगता है । इस बंधन से छुटकारे का एक मात्र उपाय चित्त की वृत्ति का निरोध है । आत्मा का प्रतिबिम्ब चित्त पर पड़ने से वह चेतन के समान कार्य करने लगता है , यही चित्तवृत्ति कहलाती है ।

योग भारतीय ऋषि - मुनियों द्वारा विश्व को दी गई एक अमूल्य देने है जो न केवल भारतीयों के लिए अपितु सारे मानव जाति के लिए एक वरदान है । इस विश्वबंधुत्व सिद्धान्त का मकसद स्वयं भी खुश रहना और अपने माध्यम से दूसरों को भी खुश रखना है । योग केवल शारीरिक व्यायाम तक ही सीमित नहीं है अपितु यह शरीर मन , बुद्धि और आत्मा को जोड़ने की समग्र जीवन पद्धति है ।

आधुनिक युग में शारीरिक पीड़ा और भावनात्मक इच्छाएं लगातार जीवन के अनेक क्षेत्रों पर भारी पढ़ रही है । परिणामतः व्यक्ति जीवन में अधिकाधिक खिंचाव , चिंता , अनिद्रा , अस्वस्थता और शारीरिक , मानसिक तनावा से पीड़ित रहता हैं । मनुष्य की अधिक सक्रियता और उचित व्यायाम में एक असंतुलन सा बन गया है । आज विश्व में स्वस्थ और सुखी जीवन रहने के लिए शारीरिक , मानसिक एवम् आध्यात्मिक समरसता की आवश्यकता है । योगिक

International
Peer-Reviewed Journal
April 2020, Volume 1, Issue 4

क्रियाएँ शरीर , मन , चेतना और आत्मा को संतुलित करके , शरीर को स्वस्थ शक्ति सम्पन्न बना कर आत्मज्ञान को उद्भासित वाली बुद्धि का विकास किया जा सकता है ।

निष्कर्षतः

यह कहा जा सकता है कि योग जिसे समाधि भी कहा जाता है वस्तुत क्लेश , विकास , काम , क्रोध , लोभ , मोह , अहंकार और ईर्ष्या आदि दोषो का शमन करके संसार में समाज और मनुष्य को भयमुक्त , निरोगी बनाकर सुखी बनाया जा सकता है । योग का उद्देश्य स्वयं में खुश रहना और अपने माध्यम से दूसरों को खुश रखना है ।

सन्दर्भ

1.युजिर योगे , धा0पा0 , 7 / 7
2. युज समाधौ , धा0पा0 , 4 / 64
3. गीता , 2 - 48
4. गीता , 2 – 50
5. पतंजलि योगदर्शन , समाधिपाद सूत्र 2
6. योग और इस्लाम , 2015 , पृ0 10
7.करान सराए बकरा आयत न . 247
8 . क्लेशाख्यदःखदत्वादविद्याऽदीना क्लेषपरिभाषा तान्त्रिकी । यो०वा० , पृ0 42
9 अविद्याऽस्मितारागद्वेषाभिनिवेशाक्लेशाः । योगसूत्र , 2 / 3
10 द्रष्टु द्रश्ययोः संयोगो हेयहेतु । पतंजलि योगदर्शन सूत्र , 2 / 17
11. तस्य हेतुरविद्या , योग सूत्र , 2 / 24
12.कठोपनिषद् , 2 / 3 / 10 - 1